अग्निसूक्तम्

वेद-ऋग्वेद मण्डल संख्या- १ सूक्त संख्या- १

ऋषि-मधुच्छन्दा देवता-अग्नि छन्द-गायत्री

अ॒ग्निमी॑ळे पु॒रोहि॑तं य॒ज्ञस्य॑ दे॒वमृ॒त्विज॑म्।

होता॑रं रत्न॒धात॑मम् ॥१॥

पदपाठ- अ॒ग्निम्। ई॒ळे। पु॒रःऽहि॑तम्। यज्ञस्य॑ दे॒वम्। ऋत्विज॑म्। हो॒तार॑म्। र॒त्न॒धात॑मम्।।

सा०भा० अग्निनामकं देवम् ईळे स्तौमि। 'ईड् स्तुतौ' इति धातुः। डकारस्य ळकारो बह्वचाध्येतृसम्प्रदायप्राप्तः। तथा च पठ्यते- 'अज्मध्यस्थडकारस्य ळकारं बह्वृचा जगुः। अज्मध्यस्थढकारस्य ळ्हकारं वै यथाक्रमम् इति। मन्त्रस्य होत्रा प्रयोज्य त्वादहं होता स्तौमीति लभ्यते। कीदृशमग्निम्? यज्ञस्य पुरोहितम्। यथा राज्ञः पुरोहितस्तदभीष्टं सम्पादयति, तथाग्निरपि यज्ञस्यापेक्षितं होमं सम्पादयति। यद्वा यज्ञस्य सम्बन्धिनि पूर्वभागे आवहनीयरूपेणावस्थितम्। पुनः कीदृशम्? होतारम् ऋत्विजम्। देवानां यज्ञेषु होतृनामक ऋत्विगग्निरेव। तथा च श्रूयते- 'अग्निर्वै देवानां होता' (ऐ०ब्रा० ३.१४) इति। पुनरपि कीदृशम्? रत्नधातमम् यागफलरूपाणां रत्नानामतिशयेन धारयितारं पोषयितारं वा।

अन्वय– यज्ञस्य पुरोहितम् देवम् होतारम् ऋत्विजम् रत्नधातमम् अग्निम् ईळे।

पदार्थ- यज्ञस्य पुरोहितम् = यज्ञ के पुरोहित, देवम्=प्रकाशयुक्त या दान आदि गुणों से युक्त, होतारम् ऋत्विजम्= देवताओं को यज्ञ में बुलाने वाले ऋत्विक, होतृ (होता) नामक ऋत्विक्, रत्नधातमम्= रत्नों का सर्वाधिक दाता या धारणकर्ता, रत्नदाताओं या रत्न धारण करने वालों में श्रेष्ठ, अग्निम्= अग्नि (देवता) को । ईळे = पूजा करता हूँ, स्तुति करता हूँ, वन्दना करता हूँ।

अनुवाद– **यज्ञ के पुरोहित प्रकाशयुक्त (या दान आदि गुणों से युक्त), देवताओं को यज्ञ में बुलाने वाले ऋत्विक् तथा रत्नों के सर्वाधिक दाता (या धारणकर्त्ता) अग्नि (देवता) को मैं पूजता हूँ (अग्नि की स्तुति करता हूँ)।**

व्याकरण-

१. यज्ञस्य- √यज् + नङ, षष्ठी एकवचन

२. देवम्-√दिव् + अच्, द्वितीया एकवचन

३. होतारम्- √हू + तृन् + द्वितीया एकवचन

४. रत्नाधातमम्- रत्नानि दधाति इति रत्नधाः, रत्नधा+क्विप्, रत्नधा+तमप्=रत्नधातमः (अतिशायी रत्नधा इति रत्नधातमः), द्वितीया एकवचन

५. इळे- ईडे (लौकिक संस्कृत में)। ऋग्वेद में दो स्वरों के मध्य में स्थित डकार का ळकार हो जाता है-'अज्मध्यस्थडकारस्य ळकारं बह्वृचा जगुः'। ईडे (= ई ड् ए) दो स्वरों के मध्य में स्थित होने से 'ड्' को 'ळ्' हो गया है। ईड् (स्तुति करना) + लट् लकार उत्तम पुरुष, एकवचन

अ॒ग्निः पूर्वे॑भि॒र्ऋषि॑भि॒रीड्यो॒ नूत॑नैरु॒त ।

स दे॒वाँ एह व॑क्षति ॥२॥

पदपाठ– अ॒ग्निः। पूर्वे॑भिः। ऋषि॑ऽभिः। ईड्यः॑। नूत॑नैः। उ॒त। सः। दे॒वान्। आ। इ॒ह। व॒क्ष॒ति॒॥

सा०भा०- अयम् अग्निः पूर्वेभिः पुरातनैर्भृग्वङ्गिरः प्रभृतिभिः ऋषिभिः ईड्यः स्तुत्यः; नूतनैः उत इदानींतनैरस्माभिरपि स्तुत्यः। सः अग्निः सन् इह यज्ञे देवान् हविर्भुजः आ वक्ष्यति। 'वह् प्रापणे' इति धातुः। आवहतु इत्यर्थः।

अन्वय- अग्निः पूर्वेभिः उत नूतनैः ऋषिभिः ईड्यः सः देवान् इह आ वक्षति।

पदार्थ- अग्निः=अग्नि (देवता), पूर्वेभिः= भृगु अङ्गिरा इत्यादि प्राचीन, उत=और, नूतनैः=नवीन, अर्वाचीन (हम), ऋषिभिः=ऋषियों के द्वारा, ईड्यः=स्तुत्य, स्तुति करने योग्य, पूजनीय, सः=वह (अग्नि देवता), देवान्=देवताओं को, इह=यहाँ (इस यज्ञ में) ले आवे।

अनुवाद– **अग्नि (देवता) (भृगु, अङ्गिरा इत्यादि) प्राचीन और नवीन (हम) ऋषियों के द्वारा स्तुत्य (पूजनीय) है, वह (अग्नि देवता) देवताओं को यहाँ (इस यज्ञ में ले आवें)।**

व्याकरण-

१. पूर्वेभिः- यह पूर्वैः का वैदिक रूप है। वेद में कभी-कभी 'बहुलं छन्दसि' सूत्र से भिस् (भिः) को ऐस् (ऐ) आदेश का अभाव हो जाता है।

२. ईड्यः-√ईड् (स्तुति करना) + ण्यत् प्रथमा एकवचन।

३. देवाँ- पद के अन्त में स्थित न् के पूर्व में आ और बाद में कोई भी स्वर हो तो न् का लोप हो जाता है तथा पूर्ववर्ती का अनुनासिक (आँ) हो जाता है। द्वितीया बहुवचन का रूप 'देवान्' है (देवान् आ)।

४. वक्षति- वह् (ले जाना) + (लोट् के अर्थ में) लृट; स्य प्रत्यय के यकार (य्) का छान्दस् लोप हुआ जिससे वक्ष्यति का वक्षति हो गया। यह लेट् लकार का भी रूप हो सकता है।

अ॒ग्निना॑ र॒यिम॑श्नव॒त्पोष॑मे॒व दि॒वेदि॑वे।

य॒शसं॑ वी॒रव॑त्तमम्॥३॥

पदपाठ– अ॒ग्निना॑। र॒यिम्। अ॒श्न॒व॒त्। पोष॑म्। ए॒व। दि॒वेऽदि॑वे। य॒शस॑म्। वी॒रव॑त्तमम्॥

सा०भा०- योऽयं होत्रा स्तुत्योऽग्निस्तेन अग्निना निमित्तभूतेन यजमानः रयिं धनम् अश्नवत् प्राप्नोति। कीदृशं रयिम्। दिवेदिवे पोषम् एव प्रतिदिनं पुष्यमाणतया वर्धमानमेव, न तु कदाचिदपि क्षीयमाणम्। यशसं दानादिना यशोयुक्तं वीरवत्तमम् अतिशयेन पुत्रभृत्यादिवीरपुरुषोपेतम्। सति हि धने पुरुषाः सम्पद्यन्ते।

अन्वय- अग्निना दिवेदिवे पोषम् एव यशसं वीरवत्तमं रयिम् अश्नवत्।

पदार्थ-अग्निना= अग्नि के द्वारा अग्नि के माध्यम से, दिवेदिवे=प्रतिदिन, पोषम्=बढ़ने वाले, वृद्धि (पुष्टि) को प्राप्त होने वाले, एव=ही, यशसम्=यश से युक्त, कीर्तिदायक, वीरवत्तमम्=श्रेष्ठ वीर पुरुषों से युक्त, पुत्रादि से अतिशय रूप से युक्त, रयिम्=धन को, अश्नवत् = प्राप्त करे।

अनुवाद- **(अग्नि की पूजा करने वाला मनुष्य) अग्नि के माध्यम से प्रतिदिन वृद्धि (पुष्टि) को ही प्राप्त होने वाले यश से युक्त (कीर्तिदायक) और श्रेष्ठ वीर पुरुषों (पुत्रादिकों) से युक्त धन को प्राप्त करे (अर्थात् अग्नि के द्वारा यजमान ऐसा धन प्राप्त करे, जो प्रतिदिन बढ़ने ही वाला हो और जो यश तथा श्रेष्ठ वीर पुरुषों से समन्वित हो)।**

व्याकरण-

१. दिवेदिवे- दिव शब्द का सप्तमी का एकवचन।

२. पोषम्– √पुष्+घञ् द्वितीया एकवचन।

३. यशसम्– यशः यस्य अस्ति इति, यशस्+अच् द्वितीया एकवचन।

४. वीरवत्तमम्- वीर+मतुप्+तमप्, द्वितीया एकवचन।

५. अश्नवत्- अश् (प्राप्त करना या व्याप्त करना) लोट्, प्रथम पुरुष एकवचन

अग्ने॒ यं य॒ज्ञम॑ध्व॒रं वि॒श्वतः॑ परि॒भूरसि॑।

स इद्दे॒वेषु॑ गच्छति॥४॥

पदपाठ– अग्ने॑। यम्। य॒ज्ञम्। अ॒ध्व॒रम्। वि॒श्वतः॑। प॒रि॒ऽभूः। असि॑। सः। इत्। दे॒वेषु॑। गच्छति।

सा०भा०- हे अग्ने त्वं यं यज्ञं विश्वतः सर्वासु दिक्षु परिभूः परितः प्राप्तवान् असि सः इत् स एव यज्ञो तृप्तिं प्रणेतुं स्वर्गे गच्छति। प्राच्यादिचतुर्दिगन्तेषु आहवनीयमार्जालीयगार्हपत्याग्नीध्रीयस्थानेषु अग्निरस्ति। परिशब्देन होत्रीयादिधिष्ण्यव्याप्तिर्विवक्षिता। कीदृशं यज्ञम्? अध्वरं हिंसारहितम्। न ह्यग्निना सर्वतः पालितं यज्ञं राक्षसादयो हिंसितुं प्रभवन्ति।

अन्वय- अग्ने! यम् अध्वरं यज्ञं विश्वतः परिभूः असि सः इत् देवेषु गच्छति।

पदार्थ- अग्ने= हे अग्नि!, यम्=जिस, अध्वरम्=हिंसारहित, यज्ञम्=यज्ञ को, विश्वतः=चारों ओर से, परिभूः असि= व्याप्त करके स्थित होते हो, व्याप्त करने वाले हो, सः= वह, इत् = ही, देवेषु= देवताओं में, गच्छति= जाता है, पहुँचता है।

अनुवाद- **हे अग्नि! (तुम) जिस हिंसारहित यज्ञ को चारों ओर से व्याप्त करके स्थित होते हो वह (यज्ञ) ही देवताओं में जाता है (देवताओं को प्राप्त होता है)।**

व्याकरण-

१. विश्वतः विश्व+तसिल्।

२. परिभूः- परि √भू+क्विप्

३. असि-√अस्+ लट्, मध्यमपुरुष, एकवचन।

४. गच्छति- √गम्+लट्, प्रथमपुरुष, एकवचन

अ॒ग्निर्होता॑ क॒विक्र॑तुः स॒त्यश्चि॒त्रश्र॑वस्तमः।

दे॒वो दे॒वेभि॒राग॑मत्॥५॥

पदपाठ– अ॒ग्नि। होता॑। कु॒विऽक्र॑तुः। स॒त्यः। चि॒त्रश्र॑वःऽत्तमः। देवः।दे॒वेभिः॑। आ। ग॒मत्।

सा०भा०- अयम् अग्निः देवः अन्यैर्देवैर्हविर्भोजिभिः सह आ गमत् अस्मिन् यज्ञे समागच्छतु। कीदृशोऽग्निः। होता होमनिष्पादकः। कविक्रतुः। कवि शब्दोऽत्र क्रान्तवचनो न तु मेधाविनाम। क्रतुः प्रज्ञानस्य कर्मणो वा नाम। ततः क्रान्तप्रज्ञः क्रान्तकर्मा वा। सत्यः अनृतरहितः फलमवश्यं प्रयच्छतीत्यर्थः। चित्रश्रवस्तमः। इति श्रवः कीर्तिः। अतिशयेन विविधकीर्तियुक्तः।

अन्वय– होता कविक्रतुः सत्यः चित्रश्रवस्तम अग्निः देवः देवेभिः आ गमत्।

पदार्थ-होता= (देवताओं को) बुलाने वाला, (देवताओं का) आह्वान करने वाला ऋग्वेद का ऋत्विक्, कविक्रतुः= कवि की प्रज्ञा (क्रतु) वाला, उत्कृष्ट (या प्रशंसनीय) बृद्धि (या कर्म) वाला, क्रान्तप्रज्ञ (अर्थात् भूत, भविष्य एवं वर्तमान को जानने वाला), सत्यः= सत्यशील, निश्चित रूप से याग के फल को देने वाला, चित्रश्रवस्तमः= अतिशय रूप में (अर्थात् अत्यधिक मात्रा में) विविध कीर्तियों वाला, अग्निः=अग्नि, देवः=देवता, देवेभिः= देवताओं के साथ, आ गमत्= आवे ।

अनुवाद- **(यज्ञ में देवताओं को) बुलाने वाला, उत्कृष्ट बुद्धि (या कर्म) वाला, सत्यशील (अर्थात् निश्चय ही याग के फलों को देने वाला) तथा अतिशय रूप में विविध कीर्तियों (यश) वाला अग्नि देवता (अन्य) देवताओं के साथ (इस यज्ञ में) आवे।**

व्याकरण-

१. कविक्रतुः- कविः क्रतुः यस्य सः, बहुव्रीहि, प्रथमा एकवचन।

२. चित्रश्रवस्तमः- चित्रं श्रवः (यशः) यस्य सः चित्रश्रवाः अतिशायी चित्रश्रवाः इति चित्रश्रवस्तमः (बहुव्रीहि), चित्रश्रवस्+तमप् प्रथमा एकवचन।

३. देवेभिः-देवैः (लौकिक संस्कृत), तृतीया, बहुवचन का यह वैदिक रूप है।

४. गमत्– गम् + लेट्, प्रथमपुरुष एकवचन। सायण ने इसे लोट् मानकर कहा है कि छत्व का अभाव तथा उकार का लोप छान्दस् है। सायण के अनुसार गमत्- गच्छतु। √गम्+लोट्, प्रथम पुरुष, एकवचन। (वैदिकरूप)

यदङ्गदाशुषे त्वमग्ने भद्रं करिष्यसि।

तवेत्तत्सत्यमङ्गिरः॥६॥

पदपाठ– यत्। अ॒ङ्ग। दा॒शुषे॑। त्वम्। अग्ने॑। भ॒द्रम्। क॒रि॒ष्यसि॑। तव॑।इत्। तत्। स॒त्यम्। अ॒ङ्गि॒रः॒।

सा०भा०- अङ्ग इत्यभिमुखीकरणार्थो निपातः। अङ्ग अग्ने! हे अग्ने त्वं दाशुषे हविर्दत्तवते यजमानाय तत्प्रीत्यर्थं यत् भद्रं वित्तगृहप्रजापशुरूपं कल्याणं करिष्यसि तत् भद्रं तव इत् तवैव। सुखहेतुरिति शेषः। हे अङ्गिरः! अग्ने एतच्च सत्यं, न त्वत्र विसंवादोऽस्ति। यजमानस्य वित्तादिसंपत्तौ सत्यामुत्तरक्रत्वनुष्ठाने नाग्नेरेव सुखं भवति।

अन्वय- अङ्ग अग्ने! त्वं दाशुषे यत् भद्रं करिष्यसि, अङ्गिरः! तत् तव इत् सत्यम्।

पदार्थ- अङ्ग अग्ने=हे अग्नि, त्वम्=तुम, दाशुषे=हवि प्रदान करने वाले (यजमान) के लिए, दान करने वाले (यजमान) के लिए, यज्=जो, भद्रम्=कल्याणकारी कर्म, करिष्यसि=करोगे, अङ्गिरः=हे अङ्गारमय (अग्नि) हे अङ्गिरा मुनि को जन्म देने वाले (अग्नि), तत्=वह, तव=तुम्हारा, इत्=ही, सत्यम्= सत्य है।

अनुवाद-**हे अग्नि! तुम हवि प्रदान वाले (अथवा दान करने वाले) (यजमान) के लिए जो कल्याण (कल्याणकारी कर्म) करोगे, हे अङ्गिरा (अङ्गारमय अग्नि)! वह तुम्हारा ही (अर्थात् तुम्हारे ही सुख का साधन) है- यह बात सत्य है।**

व्याकरण-

१. अङ्ग- किसी को अपनी ओर आकृष्ट करने के लिए प्रयुक्त सम्बोधनात्मक निपात।

२. दाशुषे- दाशृ (देना)+क्वसु प्रत्यय, चतुर्थी, एकवचन।

उप॑ त्वाग्ने दि॒वेदि॑वे॒ दोषा॑वस्तर्धि॒या व॒यम्।

नमो॒ भर॑न्त॒ एम॑सि॥७॥

पदपाठ– उप॑। त्वा॒। अ॒ग्ने॒। दि॒वेऽदि॑वे। दोषा॑ऽवस्तः। धि॒या। व॒यम्।नमः॑। भर॑न्तः। आ। इ॒मसि।

सा०भा०- हे अग्ने वयम् अनुदातारः दिवेदिवे प्रतिदिनं दोषावस्तः रात्रावहनि च धिया बुद्ध्या नमः भरन्तः नमस्कारं सम्पादयन्तः उप समीपे त्वा एमसि त्वामागच्छामः।

पदार्थ– दोषावस्तः= रात्रि (दोषा) को प्रकाशित करने वाले, अग्ने= हे अग्नि! वयम्= हम लोग, दिवेदिवे= प्रतिदिने, धिया= बुद्धि से, स्तुति से, श्रद्धा से, नमः= नमस्कार, भरन्तः= करते हुए, त्वा= तुम्हारे, उप= समीप आ आते हैं।

अनुवाद- **हे रात्रि को प्रकाशित करने वाले अग्नि! हम लोग प्रतिदिन श्रद्धापूर्वक नमस्कार करते हुए तुम्हारे समीप आते हैं।**

व्याकरण-

१. भरन्तः- √भू (धारण करना) + शतृ, प्रथमा बहुवचन।

२. इमसि- इमः (लौकिक संस्कृत); √ई (जाना)+लट्, उत्तम पुरुष, बहुवचन। 'इदन्तो मसि' सूत्र से वेद में कभी-कभी 'मः' का 'मसि' हो जाता है।

राजन्तमध्वराणां गोपामृतस्य दीदिविम्।
वर्धमानं स्वे दमे॥८॥

पदपाठ – राजन्तम्। अध्वराणाम्। गोपाम्। ऋतस्य। दीदिविम्। वर्धमानम्।स्वे। दमे।

सा०भा०-पूर्वमन्त्रे 'त्वामुपैम इत्यग्निमुद्दिश्योक्तम्। कीदृशं त्वाम्। राजन्तं दीप्यमानम्। अध्वराणां राक्षसकृतहिंसारहितानां यज्ञानां गोपां रक्षकम् ऋतस्य सत्यस्यावश्यंभाविनः कर्मफलस्य दीदिविं पौनःपुन्येन भृशं वा द्योतकम्। आहुत्याधारमग्निं दृष्ट्वा शास्त्रप्रसिद्धं कर्मफलं स्मर्यते। स्वे दमे स्वकीयगृहे यज्ञशालायां हविर्भिः वर्धमानम्।

अन्वय-राजन्तम् अध्वराणां गोपाम् ऋतस्य दीदिविं स्वे दमे वर्धमानम् (उप त्वा आ इमसि)

पदार्थ-राजन्तम्= देदीप्यमान, प्रकाशित होते हुए, अध्वराणाम्= हिंसा रहित यज्ञों के, गोपाम्= रक्षक ऋतस्य= सत्य के (अथवा कर्मफल के), दीदिविम्= प्रकाशक (अथवा द्योतक), स्वे दमे= अपने घर (यज्ञ शाला) में, वर्धमानम्= बढ़ते हुए।

अनुवाद- **देदीप्यमान (प्रकाशित होते हुए), हिंसारहित यज्ञों के रक्षक, सत्य के प्रकाशक (अथवा यज्ञ-फल के द्योतक) और अपने घर (यज्ञशाला) में बढ़ते हुए (तुम्हारे समीप हे अग्नि! हम आते हैं)।**

व्याकरण-

१. राजन्तम्- √ राज् (प्रकाशित होना)+शतृ, द्वितीया, एकवचन।

२. दीदिविम्- √दिव् (प्रकाशित होना)+क्विन्, धातु का द्वित्व, द्वितीया एकवचन।

३. वर्धमानम्-√वृध् (बढ़ना)+शानच्+द्वितीया, एकवचन।

स नः॑ पि॒तेव॑ सू॒नवेऽग्ने॑ सू॒पाय॒नो भ॑व।

सच॑स्वा नः स्व॒स्तये॑॥१॥

पदपाठ– सः। नः। पि॒ताऽइ॑व। सू॒नवे॑। अग्ने॑। सु॒ऽउ॒पाय॒नः। भ॒वः।सच॑स्व। न॒ः। स्व॒स्तये॑।

सा०भा०- हे अग्ने सः त्वं नः अस्मदर्थं सूपयानः शोभनप्राप्तियुक्तः भव। तथा नः अस्माकं स्वस्तये विनाशराहित्यार्थं सचस्व समवेतो भव। तन्नोभयत्र दृष्टान्तः। यथा सूनवे पुत्रार्थं पिता सुप्रापः प्रायेण समवेतो भवति, तद्वत्।

अन्वय- अग्नेः! सः (त्वं) सूनवे पिता इव नः सूपायनः भव। स्वस्तये नः सचस्व।

पदार्थ- अग्ने= हे अग्ने!, सः= वह (तुम), सूनवे= पुत्र के लिए, पिता इव= पिता के समान, नः= हमारे लिए, सूपायनः= आसानी से पहुँचने योग्य, सरलता से पहुँचने योग्य, सुगम, भव= होवो, बन जाओ, स्वस्तये= कल्याण के लिए, नः = हमारे, सचस्व= साथ रहो।

अनुवाद- **हे अग्नि! वह (तुम) पुत्र के लिए पिता के समान हमारे लिए सरलता से पहुँचने योग्य बन जाओ (सुगम बनो) (अर्थात् जिस प्रकार पिता अपने पुत्र के लिए आसानी से पहुँचने योग्य होता है, उसी प्रकार तुम हमारे लिए पहुँचने योग्य होवो)। (हमारे) कल्याण के लिए हमारे साथ रहो।**

व्याकरण-

१. सूपायनः- सु+उप+√इ+युच्, सुखेन उपायनं यस्य सः सूपायनः।

२. भव- √भू + लोट् मध्यम पुरुष, एकवचन।

३. स्वस्तये- सु+√अस्+क्तिन्, चतुर्थी, एकवचन। लौकिक संस्कृत में स्वस्ति के रूप नहीं चलते, यह अव्यय है।

४. सचस्व- √सच् + आत्मनेपद, लोट्, मध्यम पुरुष, एकवचन, छान्दस् दीर्घता।